Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.gisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2023 GISRRJ | Volume 6 | Issue 5 | ISSN : 2582-0095

भारत छोड़ो आंदोलन में स्त्रियों की भागीदारी

नाज़नीन कौसर

शोधार्थी, हिंदी विभाग, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली

Article Info
Volume 6, Issue 5
Page Number : 11-18
Publication Issue :
September-October-2023
Article History
Accepted : 01 Sep 2023
Published : 12 Sep 2023

सारांश:- यह भारतीय समाज एवं राजनीति की दरिद्रता है कि उसने स्त्री के साथ सामाजिक और राजनैतिक न्याय नहीं किया। ऐसा लगता है राष्ट्रवाद के विकास के साथ उतरोत्तर स्त्री संबंधित मुद्दे धीरे-धीरे धुंधले पड़ने लगे। राष्ट्रवाद स्त्री प्रश्न को अपने समाज की आंतरिक समस्या मानते हुए उन्हें सुलझाना चाहता था किन्तु यह मात्र एक ढोंग था। तभी तो उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्त्री मुक्ति का प्रश्न राष्ट्रवादी आंदोलन के एजेंडे ओझल हो गया। अत: सामान्य वर्ग की महिलाओं की राजनैतिक भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए स्त्रियों का शिक्षित व जागरूक होना आवश्यक था। नवजागरण के आगमन से भारतीय राजनीति का यह कोना भी देदीप्यमान हो उठा।

मूलशब्द:-भारतीय महिला आंदोलन, राष्ट्रवाद, स्त्री शिक्षा, राजनीति इत्यादि.

भारत छोड़ो'आंदोलन में स्त्रियों की भागीदारी कोई चमत्कार नहीं था और न ही स्त्रियाँ अचानक राजनैतिक चेतना संपन्न हो गई।सुचेता कृपलानी, अरुणा असफल अली, मातंगिनी हाज़रा, सरोजिनी नायडू जैसी स्त्रियों की आंदोलन में हिस्सेदारी को समझने के लिए स्त्री चेतना की सामाजिक-राजनैतिक पृष्ठभूमि को समझना ज़रूरी है।19वीं सदी के उत्तरार्ध में हुए सामाजसुधार आंदोलनों के फलस्वरूप स्त्री शिक्षा के प्रचार-प्रसार और स्त्री शिक्षा के स्वरूप पर जो बहसें छिड़ी उसके परिणाम स्वरूप समकालीन शिक्षित महिलाओं ने परम्परागत स्त्री प्रतिमानों को ध्वस्त कर दिया।

सत्तावन की क्रांति की विफलता का मुख्य कारण रहीं- जन सामान्य व समाज के प्रत्येक वर्ग में जागरूकता की कमी, शिक्षा का अभाव, सामाजिक कुरीतियाँ, स्त्री संबंधी दृष्टिकोण। सामाज सुधारकों, एवं अग्रणीय नेताओं ने नवजागरण के प्रकाश में भारतीय समाज की जड़ मान्यताओं एवं कुरीतियाँ पर प्रहार किया। राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती, फूले दंपत्ति, फ़ातिमा शेख़, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर इत्यादि ने सामाजिक स्तर पर बड़े बदलाव की पृष्ठभूमि तैयार की। यह परिवर्तन मुख्य रूप से पहले बंगाल एवं महाराष्ट्र में घटित हुआ। इस सन्दर्भ मेंरमण सिन्हा कहते हैं "ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो उन्नीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में जो बंगाल या महाराष्ट्र में घटित हुआ है, वह हिंदी क्षेत्र में उत्तरार्द्ध में घटित होता दिखाई पड़ता है।"[1]शिक्षा के प्रकाश में इन महिलाओं ने अपने अधिकारों के प्रति जो सक्रियता एवं सजगता दिखाई उसके

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

परिणामस्वरूप सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन में महिलाओं की स्थिति में बड़ा परिवर्तन आया और बीसवीं सदी के आरम्भ में शिक्षित महिलाओं की एक जमात खड़ी हो गई। अत: कहा जा सकता है कि "नवजागरण हिन्दी भाषा या साहित्यकार का ही नवजागरण नहीं है,बल्कि समग्रता में हिन्दी जाति का नवजागरण है,जिसमें स्त्रियाँ है,राजनीति है,पत्रकारिता है,संस्कृति है और है हिंदी भाषी क्षेत्रों में अदम्यता के साथ दहकती स्वाधीनता की भावना का नवजागरण।"[2]1857 की क्रांति में रानी लक्ष्मीबाई,झलकारी बाई,असगरी बेगम,हबीबा,बख्तावरी देवी, बेग़म हज़रत महल,शोभादेवी शर्मा, रानी चेन्नमा आदि महिलाओं ने भाग लिया।ग़ौरतलब है कि सत्तावनकी क्रांति में राजपरिवार, संभ्रात व संपन्नपरिवार की महिलाओं की भागीदारी अधिक थी अत: सामान्यवर्ग की महिलाओं की राजनैतिक भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए स्त्रियों का शिक्षित व जागरूक होना आवश्यक था। नवजागरण के आगमन से भारतीय राजनीति का यह कोना भी देदीप्यमान हो उठा।अत: तत्कालीन समाज सुधारकों एवं राजनेताओं ने इस समस्या को गंभीरता पूर्वक लिया एवं इसके निवारण हेतु समाज सुधार अभियान चलाए। नवजागरण के अग्रदूतों ने स्त्री शिक्षा पर ज़ोर दिया परिणामस्वरूप हिंदी पट्टी में यह बहस ज़ोर पकड़ने लगी कि स्त्रियों के लिए कैसी शिक्षा हो इस पर लंबी बहस चली कि क्या वह पुरुषों के समान हो ? या पुरुषों से भिन्न हो ? या नीतिपरक हो !

इस संदर्भ में तत्कालीन पत्रिकाओं में अलग-अलग लोगों ने अलग अलग मत प्रकट किए। परंपरा प्रेमी 'सरस्वती' पत्रिका में 1903 व 1913 में 'सौभाग्यवती रखमाबाई' एवं ' स्त्री शिक्षा की आलोचना' विषय पर विचार किए गए। सरस्वती पत्रिका में ऐसे विषयों पर न जाने कितने लेख छपे। ऐसा लगता है 'सरस्वती' पत्रिका ने ही 'मोरल पुलिसिंग' का बीड़ा उठा लिया था। फ़रवरी 1885 ई. में बालकृष्ण भट्ट ने ' स्त्रियाँऔर उनकी शिक्षा' नामक लेख में लिखा – "मानसिक व्यापार से जितनी बातों का संबंध है उनसे स्त्रियाँ कोसों दूर हैं।"[3] जिन्होंने स्त्री को बौद्धिक स्तर पर औसत से भी नीचे का दर्जा दिया उस समाज से ऐसे प्रश्न आने स्वाभाविक है।ऐसा लगता है ये शिक्षा के नाम पर स्त्रियों के लिए नैतिकता का सर्टिफ़िकेट कोर्स करवाना चाहते थे। 'मर्यादा' पत्रिका में लाला लाजपत राय ने 'भारत वर्ष में स्त्रियों का पद' के अन्तर्गत लिखा है- " स्त्रियों को गृह कार्यों की शिक्षा दी जानी चाहिए पर ऐसी शिक्षा नहीं जो उन्हें गृह के धर्म कर्तव्यों से ज़रा भी विमुख करे।"[4]इसी संदर्भ में प्रोफेसर 'फ्रेंचेस्का ऑर्सीनी' अपनी किताब में पुरुषोत्तमदास टंडन के इस कथन को रेखांकित करती हैं- "I believe that the ideal of the whole women's education shouldbe of making them into sugrhinis."[5]स्त्री शिक्षा के प्रयोजन कि इन बहसों से एक बात प्रमाणित होती है कि "वे स्त्री को शिक्षित भी करना चाहते थे और आर्थिक स्वावलंबन के साथ ही अधीनस्थ भी बनाए रखना चाहते थे।"[6]इन्होंने एक बार भी इस विषय पर सोचना ज़रूरी नहीं समझा कि स्त्री अपने लिए क्या चाहती है।बजाय इसके उन्होंने स्त्री शिक्षा के उद्देश्य को पितृसत्ता के पिष्टपोषण के रूप में देखा।स्त्री शिक्षा के संबंध में नेताओं एवं समाजसुधारकों के वैचारिक अंतर्विरोध को स्पष्ट करते हुए 'फ्रेंचेस्का ऑर्सीनी' लिखती हैं " This attitude was especially prominent in cartoons, even those in magazines like Camd which fervently championed the cause of women's education: whether 'at home' or 'in the world', they seemed to say, women's progress must always carry the brand of Indianness."[7] "On the other hand, college girls featured largely in romantic narratives without any moral stigma attached: Dhaniram Prem, Pandey Bechan Sharma Ugra,

Nirala employed educated heroines as characters who possessed not only 'womanly virtues' but also wit, intelligence, passion and determination."[8]

स्त्री शिक्षा संबंधी इन बहसों के बीच कई समाज सुधारकों ने अपने बलबूते परस्कूल कॉलेज का निर्माण कराया जिसमें फूले दंपति एवं फ़ातिमा शेख़ का नाम अग्रणीय है। उस दौर में उन पर कई तरह से हमले हुए।जब स्कूल खोलने और पढ़ाने वाले इस स्तर का संघर्ष कर रहे थे ऐसे कठिन समय में लड़कियों को स्कूल कॉलेज में पढ़ाने के लिए उदारता दिखाने वाले लोग बिरले ही रहे होंगे। उस दौर में संभ्रांत , शिक्षित व राज घराने वाले अपने स्त्रियों को पढ़ाते- लिखाते थे।शिक्षा के संदर्भ में भी सर्वहारा, दलितों एवं मुसलमान महिलाओं ने अतिरिक्त संघर्ष किया। यह कितनी बड़ी विडंबना है कि तत्कालीन राजनेता स्त्री से राजनैतिक सक्रियता की माँग तो करते हैं लेकिन उनके शिक्षा के अधिकार पर चुप्पी साध लेते हैं। जिनकी शिक्षामें भागीदारी पर इतना बवाल मचा, राजनीति में उनकी हिस्सेदारी कितनी चुनौतीपूर्ण रही होगी।समाज सुधार के पुरोधा भी स्त्रियों के वैज्ञानिक,तार्किक या यूँ कहें पश्चिमी ढंग की शिक्षा के ख़िलाफ़ थे। महिलाओं की शिक्षा का प्रयोजन भी अच्छी गृहिणी तक सीमित कर दिया गया। उन्हें इतिहास व प्रेम से दूर रखने की साज़िश कि गई। वे नहीं चाहते थे कि महिलाएँ इतिहास पढ़े तभी तो भारतेंदु जी कहते हैं -" बड़ी लड़कियों को प्रेम सागर (लल्लूलाल का बनाया) ग्रन्थ पढ़ने के लिए नहीं देना चाहिए। चरित्र निर्माण (मोरालिटी)और घरेलू प्रबंध वग़ैरह के बारे में बताने वाले अच्छी पाठ्यपुस्तकें उनके पाठ्यक्रम में लगानी चाहिए।"[9]बलिया में दिए भाषण में भारतेंदु का कहना था कि ऐसी चाल से उनको शिक्षा दीजिए कि वह अपना देश और कुल धर्म सीखें, पति की भक्ति करें और लड़कों को सहज शिक्षा दें।"[10]तत्कालीन राजनेताओं के फूहड़पने एवं धूर्तता का भंडाफोड़ 'मर्यादा' पत्रिका के जून 1920 के अंक में कुसुम कुमारी ने 'कांग्रेस की महासभा' लेख में किया।वे लिखती हैं "मैंने अपनी बहनों को समुद्र की तरह उमड़ते देखा परंतु अफ़सोस की बंदेमातरम् गीत के अलावा कुछ सुनाई नहीं पड़ता था।"[11]इस कथन से यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि उस दौर में अधिवेशनों में स्त्रियों को आमंत्रित तो किया जाता था किन्तु उनके बैठने तक की व्यवस्था नहीं होती थी।मंच पर दिए गए भाषणों की आवाज़ उन तक न पहुँच पाए तो उन्हें बुलाने या न बुलाने का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। इन सभी अंतर्विरोधों के बावजूद बांग्ला नवजागरण का प्रभाव हिंदी क्षेत्र पर पड़ा है और इसका माध्यम बनी पत्र-पत्रिकाएं। कमला, स्त्रीदर्पण, गृहलक्ष्मी, आर्य महिला, प्रभा, मर्यादा, चाँद आदि पत्रिकाओं के माध्यम से स्त्री चेतना का प्रचार-प्रसार हुआ। 'मर्यादा' में स्त्रियों के राजनीतिक अधिकारों पर अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण लेख देखने को मिलते हैं। इस समय पत्र-पत्रिकाओं में स्त्री संपादिका व लेखिकाएं अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही थी।1900 में कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में श्रीमती गांगुली बंगाल की एक प्रतिनिधि थी।इन्होंने इस अधिवेशन में वक्तव्य भी दिया था। तत्पश्चात बंग- भंग के समय स्वदेशी आंदोलन में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया एवं विदेशी वस्तुओं की होली जलाई। कई महिलाओं ने गिरफ्तारियां भी दी। मैडम भीकाजी कामा ने इंग्लैण्ड व फ़ान्स आदि विदेशों में भारत के क्रान्तिकारी आंदोलन को गति प्रदान की।प्रथम विश्वयुद्ध की अवधि में एनी बीसेंट ने 'होमरूल आंदोलन' चलाया। इस समय तक आते-आते स्त्री शिक्षा से स्त्री नेतृत्व की यात्रा तय हो चुकी थी। चूंकि अब तक महिलाओं के लिए पुरुषों ने आंदोलनकिए, सुधार संबंधीकार्य किए किन्तु प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात स्त्रियों ने अपनी समस्याएं अपने तरीक़े सेसुलझाने शुरू किए।फलस्वरूप भारतीय राजनीति में तीव्रता से स्त्रियों का प्रवेशहुआ। नवजागरण पूर्व राजनीति में सिर्फ़ अभिजात्य वर्ग की स्त्रियों की

भागीदारी थी किन्तु इस बार बंगाल में प्रीतिलता, कल्पना दत्त व वीणादास अग्रणीय क्रांतिकारियों के रूप में उभरकर आईं।इन महिलाओं ने पत्र–पत्रिकाओं के सहारे महिलाओं को सशक्त किया।चाँद, स्त्री–दर्पण, मर्यादा,प्रभा,सरस्वती आदि पत्रिकाओं के माध्यम से स्त्री–चेतना उभर कर आई।स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रहे राजनेताओं से लेकर साहित्यकारों ने स्त्रियों की भागीदारी को जिस रूप में देखा, उसकी चर्चा किए बिना बात अधूरी रह जाएगी। नेताओं ने स्वतंत्रता आंदोलन में स्त्री की भागीदारी की सराहना तो की किन्तु उनके मताधिकार का विरोध किया।ऐसे में सरोजिनी नायडू ने मांटेग्यु चेम्सफोर्ड के समक्ष कांऊनसिल चुनाव में स्त्री मताधिकार को लेकर जो विरोध किया उसकी अनुगूँज 'भारत छोड़ो'आंदोलन में स्त्रियों की भागीदारी के रूप में सामने आई।स्वतंत्रता सेनानी के रूप में लड़ती हुई मातांगिनी हाज़रा शहीद हो गई तो,अन्य महिलाओं नेनेताओं के गुप्तचर विभाग के रूप में काम करते हुए आंदोलन को गती प्रदान की। कॉलेज की छात्राओं ने स्त्रियों, किसानों और श्रमिकों का समूह बनाकर आंदोलन का नेतृत्व किया।आंदोलन के समय स्त्रियों ने लोक गीतों के माध्यम से सूचनाओं का प्रचार–प्रसार किया एवं आंदोलन में भागीदार कर्मियों को प्रश्रयदिया।

तत्कालीन पत्र–पत्रिकाओं पर ध्यान दिया जाए तो यह बात उभरकर आती है कि हिंदी के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं में भी महिलाओं ने समाज सुधार के संदर्भ में सक्रियता से बहुत कुछ लिखा। मुस्लिम महिलाओं ने भी स्वतंत्रता संग्राम में आपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन महिलाओं ने पत्र – पत्रिकाओं के संपादन के साथ–साथ जुलूसों का नेतृत्व किया एवं जेल यात्राएं भी की। जिस तरह हिंदी में 'चंद' एवं 'मर्यादा' जैसी पत्रिकाओं ने समाज सुधार का बीड़ा उठाया ठीक उसी प्रकार मुस्लिम महिलाओं ने 'शम्सुलन्हार', 'ख़ातून', 'अलहिज़ाब', 'ख़ादिम', 'सरताज', 'हरम', 'ख़ातून–ए–मशरिक़' इत्यादि पत्रिकाओं का संपादन किया।यह हिन्दी जातिके इतिहास का गौरवशाली युग था जिसमें सभी महिलाओं ने धर्म, जाति एंव लिंग की परवाह किए बिना एक बेहतर समाज के निर्माण की मुहिम चलाई। इन सकारात्मक परिणामों के बाद भी तत्कालीन नेताओं ने स्त्री की भूमिका को घर की चाहरदीवारी तक ही सीमित रखना चाहा किंतु स्त्रियाँ अब रुकने वाली नहीं थी, उन्हें अब और आगे बढ़ना था; बहुत लंबा सफ़र तय करना था। जिस समाज के पुरुष स्त्रियों को औसत दर्जे का द्वयम नागरिक समझते हों वे स्त्रियों के वोट के अधिकार पर क्या ही कहते। अत: स्त्रियों के वोट के अधिकार पर बहुत फ़ज़ीहतें हुई ।स्त्रियों ने भी हार नहीं मानी एवं तत्कालीन पत्र–पत्रिकाओं के द्वारा उनको मुँह तोड़ जवाब दिया। उस दौरान 'मर्यादा' एवं 'प्रभा' दो महत्वपूर्ण पत्रिकाएं थी जिसमें स्त्रियों को वोट के अधिकार पर ख़ूब वाद– विवाद हुआ करते थे। बात यहीं तक नहीं रुकी बल्कि अगस्त 1928 में बंबई–कांग्रेस में सरोजनी नायडू ने काउंसिलों के चुनाव में स्त्रियों के वोट के अधिकार का प्रस्ताव रखा, प्रतिक्रियास्वरूप लाला लाजपतराय,मदन मोहन मालवीय एवं गोखले इत्यादि नेताओं ने इसका विरोध किया।इस संदर्भ में 'सुनन्दा पराशर' का कहना है कि "मालिकाना भाव से भरी परंपरागत दृष्टि यह स्वीकार नहीं कर पा रही थी कि स्त्री घर से बाहर निकलकर पुरुष की सहायता और उसके आसरे के बिना कुछ करे...।"[12]राजनेताओं को ऐसा क्यों लगता है कि वोट के अधिकार भर से वे स्त्रीत्वहीन हो जाएंगी ! राजनीतिक सक्रियता के संदर्भ में पुरुष चरित्र के पतन पर, उसकी नैतिकता पर किसी ने कोई टीका–टिप्पणी नहीं की लेकिन स्त्री के राजनीतिक में आने के क़यास भर से उसके चरित्र एवं नैतिकता पर टीका–टिप्पणी शुरू हो जाती है। इस प्रसंग को समझने के लिए यशपाल के उपन्यास पार्टी कॉमरेड की मुख्य

पात्र 'गीता' के राजनैतिक जीवन को समझना आवश्यक हो जाता है। स्त्री मर्दों की तुलना में औसत बुद्धि की ही होगी, यही सोच इस उपन्यास की महिला पात्र के संदर्भ में सटीक बैठती है तभी तो राजनैतिक भागीदारी के नाम पर गीता का उपयोग एक 'आइ कैंडी' के रूप में होता है। इसी उपन्यास के पात्र 'रंगा'के मुख से लेखक ने कहलवाया है – "जिस बात से पार्टी की सहायता हो उसमें धत् क्या ? गर्ल्स कैन मेक कॉन्टैक्ट्स ईज़ीली।"[13]समाज महिलाओं को उसकी यौनिकता से परे सोच ही नहीं सकता, तभी तो 'गीता' और 'पद्म लाल' के संबंध में अख़बारों ने गीता के चरित्र पर छींटाकशी की परिणामस्वरूप गीता की माँ ने उसका घर से बाहर निकलना बंद करवा दिया। स्त्रियों के मामले में समाज पहले से ही इतना संवेदनहीन, नीतिपरक रहा है कि तत्कालीन नेताओं के स्त्री विरोधी मतों का समाज के कुछ हिस्से ने आँख मूंदकर विश्वास कर लिया होगा। इन सब के अलावा भारतीय राजनीति में गांधी जैसे नेता भी हुए जिन्होंने स्पष्ट रूप से कहा–" I would boycott that legislature which will not have a proper share of women members."[14]इसी बीच 1925 में सरोजनी नायडू को I.N.A का अध्यक्ष चुना गया। कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में अपने उद्गार वक्तव्य में सरोजनी ने कहा था कि'जब तक मेरे शरीर में प्राण है, मेरी रगों में लहू है, मैं आज़ादी के लिए युद्ध करती रहूंगी।'गांधीऔर सरोजनी नायडू केइन क्रांतिकारी शब्दों का ही परिणाम था कि 1930 के दांडी मार्च में गाँधी जी का साथ लाखों महिलाओं ने दिया। "यह संभवत: पहला राष्ट्रव्यापी आंदोलन था जिसने पूरे देश की स्त्रियाँ बड़ी संख्या में शामिल हुई।"[15]इस संदर्भ में सुभाषचन्द्र बोस का कहना है – " his civil disobedience campaigns brought about in a dramatic Manner, the entry of women in large numbers into the public life of India. These became the starting point of women's emancipation in our land."[16] हालाँकि इस आंदोलन में गांधी ने अपने साथ शामिल सदस्यों में किसी स्त्री सदस्य को शामिल नहीं किया था जबकि वे स्त्रियों की राजनैतिक भागीदारी के पक्षधर थे। उनका मानना था कि स्त्रियाँ परिवार के दायरे में रहकर अपनी सक्रियता दिखाएं। वे भी अन्य नेताओं की तरह स्त्रियों को पश्चिम में मिली छूट के पक्ष में नहीं थे अत: उनका भी मानना था कि स्त्रियाँ भारतीय मूल्यों को लेकर आगे बढ़ें। एक मात्र सरोजनी नायडू ही ऐसी महिला थीं जो दांडी मार्च के अंतिम दिनों में महात्मा गांधी के साथ शामिल हुईं। तात्कालिक परिवेश में स्त्री के प्रति ऐसी उदासीनता के कारण ही शायद 'रेणु' ने 'मैला आँचल' में एक भी स्त्री पात्र को राजनैतिक रूप से सक्रिय नहीं दिखाया है।'मैला आँचल' एक आंचलिक उपन्यास होने के साथ राजनैतिक कलेवर की कथानक को पिरोए हुए है। उपन्यास में राजनैतिक गतिविधियां चलती रहती है किन्तु कोई स्त्री पात्र राजनीति में सक्रिय दिखाई नहीं पड़ती। मैला आँचल का गाँव ठेठ गाँव है जहां शैक्षणिक या सामाजिक सुधारों की दूर-दूर तक कोई अनुगूँज सुनाई नहीं पड़ती। ऐसे में किसी स्त्री का राजनीति में आना सहज स्वाभाविक नहीं लगता। तत्कालीन समाज में स्त्री मात्र 'कामिनी' समझी गई तभी तो मठाधीश द्वारा नाबालिग 'लछमीनिया' का बचपन से किशोरावस्था तक बलात्कार होता रहा। ऐसे समाज में स्त्रीयाँ जुलूस,पार्टी के कार्यक्रमों में जाएं भी तो कैसे? इसी प्रश्न के आस-पास भटकते हुए यशपाल ने अपने उपन्यासों में स्त्री चेतना एवं स्त्री की राजनैतिक भूमिका को उकेरा है। यशपाल के यहाँ स्त्रियाँ राजनैतिक रूप से सक्रिय हैं जबकि रेणु के यहाँ 'जलवा' कहानी की 'फ़ातिमादि' के अतिरिक्त और कोई पात्र नहीं है।शायद इसकी एक वजह यह भी रही हो कि यशपाल की कथानक की पृष्ठभूमि शहरी, निम्न मध्य वर्ग या मध्यवर्गी है जबकि रेणु के कथा साहित्य की पृष्ठभूमि भारत का पिछड़ा ग्रामीण इलाक़ा है। यशपाल ने 'झूठा सच' में 'तारा'

को एक शिक्षित महिला के रूप में चित्रित किया है जो उत्तरोत्तर राजनीति में सक्रिय होती है वहीं 'पार्टी कॉमरेड' की गीता बम्बई के कॉलेज में पढ़ती है, विद्यार्थी जीवन में राजनीति में भाग लेती है, जिससे उसकी राजनैतिक समझ और पकड़ दिन-प्रतिदिन बेहतर होती चली जाती है।'तेरी मेरी उसकी बात'(उपन्यास) की 'उषा' भी शिक्षित महिला है जो 1942 की क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

स्त्रियों की सक्रियता का पता इसी बात से लगाया जा सकता है कि पहली बार नमक सत्याग्रह के दौरान गांधी जी के नेतृत्व में लगभग सत्रहहज़ार महिलाओं ने भाग लिया। "काकोरी कांड के कैदियों के मुक़दमे की पैरवी के लिए सुशीला दीदी ने अपने विवाह के लिए रखा हुआ सोना उठाकर दान में दे दिया।"[17]सरोजनी नायडू, कमला नेहरू, कमला देवी, लाडोरानी जुत्शी ,अरुणा आसफ़ अली इत्यादि ने अपने अपने स्तर पर आंदोलन का नेतृत्व किया।इनके अतिरिक्त देश की सामान्य स्त्रियों ने भी भिन्न-भिन्न प्रकार से आंदोलन में अपनी भूमिका सुनिश्चित की। "वास्तव में उसमें से अधिकांश महिलाएँ रूढ़ियों के भार से दबी जा रही थी, अत: देश की जागृति के साथ साथ उनकी क्रांति ने भी आत्मा विज्ञापन का अवसर और उससे उपयुक्त साधन पा लिए।"[18]1935 के भारत सरकार अधिनियम के तहत अधिकतर प्रांतों में कांग्रेस के मंत्रिमंडल बनें। इनमें महिलाओं को भी मंत्री बनाया गया।विजयलक्ष्मी पण्डित, सुचेता कृपलानी मंत्री बनीं।अनुसूया बाई काले को आँध्र प्रदेश विधानसभा का उपाध्यक्ष बनाया गया है।राजनैतिक पद पर आसीन महिलाओं के अतिरिक्त हिन्दी की स्त्री रचनाकारों ने भी अपने लेखनी से स्वतंत्रता का बिगुल बजाया। सुभद्रा कुमारी चौहान ने 'झाँसी की रानी' कविता के माध्यम से जन सामान्य को जागृत किया तो वहीं महादेवी वर्मा ने 'श्रृंखला की कड़ियां' लिखकर पराधीनता की बेड़ियों से आज़ादी का आह्वान किया। सुभद्रा कुमारी चौहान पत्र- पत्रिकाओं के माध्यम से जन-सामान्य को जागृत करने के अलावा राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेती रहीं ; इसी क्रम में उन्हें जेल की सजा भी काटनी पड़।

दांडी मार्च के बाद 'भारत छोड़ो आन्दोलन' भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में सबसे बड़ी घटना मानी जाती है जिसमें समाज के प्रत्येक वर्ग ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। गांधी जी के नेतृत्व में 'करो या मरो' का नारा लगाते हुए पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर महिलाओं ने देश के कोने-कोने से आंदोलन का नेतृत्व किया।बंगाल से वृद्ध मातांगिनी हाजरा ने भारत छोड़ो का नेतृत्व किया तो पंजाब से पार्वती देवी ने इस दौरान कई बार जेल की यात्राएं की। उषा मेहता ने रेडियो द्वारा गुप्त प्रसारण कर आन्दोलन की तीव्रता को बढाया।बहुरिया रामस्वरूप देवी, सरोजनी नायडू,कस्तूरबा गांधी, सुभद्रा कुमारी चौहान एवं अरुणा असफल अली जैसी स्त्रियों ने इस आंदोलन को विशालता प्रदान किया।वहीं 1942 के आंदोलन में क्रांतिकारियों की मदद करना 'महादेवी वर्मा' की आदत बन गई थी।जब कोई उन्हें सावधान करता तो वे कहती - "...विश्वास के साथ आए हुए देश प्रेमी बंधुओं का अपमान भी तो नहीं कर सकती।इस समय देश को बहुत बड़े बलिदान की आवश्यकता है, तो क्या मैं इतना भी व करूँ।"[19]इसके अलावा स्त्रियों ने कहीं गुप्तचर के रूप में आंदोलन की सूचनाओं का आदान-प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, तो कहीं आंदोलन के लिए चंदा जमा करके आंदोलन को मूर्छित होने से बचाया। इतिहासकार पी.एन. चोपड़ा ने 'historic judgements on quit India movement' में भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान आदान- प्रदान किये गए पत्रों, अख़बार एवं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित तथ्यों, चिट्ठियों एवं सरकार की ओर से प्राप्त जानकारियों का किताब के रूप में संपादन किया है। जिसमें देश भर की सामान्य स्त्रियों के योगदान को भी

रेखांकित किया गया है –" The central provinces report on early incidents contains a reference to a woman teacher in the Mahila Ashram of Wardha, admitting to a sub inspector that she obtained her degree, to dig trenches in the road, paralyse traffic, cut-off telegraph and telephone wdres . She said she had not acted on her own initiative, but her inspiration came from Gandhi who wanted so many things to be done."[20]

1942 की क्रांति ने अंग्रेजों को यह एहसास दिला दिया कि अब भारत में उनकी गिनती के दिन रह गए हैं क्योंकि स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में समाज के प्रत्येक वर्ग ने अलग-अलग स्तर पर अपना योगदान दिया। क्रान्तिकारियों का यही जज़्बा और जुनून 1947 तक जारी रहा जिसके परिणामस्वरूप देश स्वाधीन हुआ। ग़ौरतलब है कि स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रही महिलाएं स्वतंत्र भारत की राजनैतिक परिदृश्य से ग़ायब रहीं। यह दुखद है कि देश की आज़ादी में जिन महिलाओं ने यातनाएं सहीं, जेल यात्राएं की, हर तरह का त्याग और बलिदान दिया, स्वतंत्र भारत की राजनीति में उनकी भागीदारी नगण्य रही। कमला कुमारी जैसी इक्का-दुक्का महिलाएँ ही स्वतंत्र भारत की राजनीति में सक्रिय रहीं। इस संदर्भ में फणीश्वरनाथ रेणु की 'जलवा' कहानी बहुत प्रासंगिक जान पड़ती है जिसमें रेणु ने स्त्रियों की राजनीतिक निष्क्रियता का भांडाफोड़ किया है। अजीत और फ़ातिमादि के प्रश्नोत्तर से काफ़ी हद तक इस सवाल का जवाब मिल जाता है। अजीत 'फ़ातिमादि' से पूछता है- 'आपने पॉलिटिक्स क्यों छोड़ी...' इसके प्रत्युत्तर में फ़ातिमादि कहती हैं –" अपने नेतांओं से क्यों नहीं जवाबतलब करते ? कल तक गांधी-जवाहर-पटेल को सरेआम गालियाँ देनेवाले, कौमी झंडे को जलानेवाले फिरकापरस्त लीगियों की इज्जत अफजाई की गई और मुल्क के लिए मरने-मिटनेवालों को दूध की मक्खियों की तरह निकाल फेंका।...तुम खुद अपने से यह सवाल क्यों नहीं पूछते?"[21]

अत: 1942 के आन्दोलन की पृष्ठभूमि बहुत पहले ही तैयार हो रही थी। असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन एवं दांडी मार्च जैसे बड़े राजैतिक घटनाक्रम में उतरोत्तर महिलाओं की भागीदारी से ही भारत छोड़ो आन्दोलन में इतनी बड़ी संख्या में समाज के प्रत्येक तबके की महिलाओं ने भाग लिया। परतंत्र भारत की राजनीती में पहली बार 'पैसिवनेस' को छोड़कर स्त्रियों ने अपनी सक्रीय भागीदारी सुनिश्चित की। किन्तु उसका यह सफ़र इतना आसन नहीं था।सच्चाई तो यह है कि इक्का-दुक्का पुरुषों को छोड़कर बहुधा पुरूषों ने कभी चाहा ही नहीं कि स्त्रियाँ सक्रिय राजनीति का हिस्सा बने, ऐसा लगता है किसी मजबूरी के तहत नेताओं ने स्त्रियों को राजनीति में आने दिया और अपना प्रयोजन सिद्ध होते ही स्वतंत्र भारत के राजनैतिक परिदृश्य से उन्हें ग़ायब कर दिया। आधी आबादी का हिस्सा होकर भी स्त्रियाँ अपने राजनैतिक अधिकार से वंचित है। सत्ताधारी पुरुषों के मन में यदि कोई खोट नहीं होता तो अब तक 33 प्रतिशत आरक्षण का मुद्दा ठंडे बस्ते में नहीं पड़ा होता। यह भारतीय समाज एवं राजनीति की दरिद्रता है कि उसने स्त्री के साथ सामाजिक और राजनैतिक न्याय नहीं किया। ऐसा लगता है राष्ट्रवाद के विकास के साथ उतरोत्तर स्त्री संबंधित मुद्दे धीरे-धीरे धुंधले पड़ने लगे।राष्ट्रवाद स्त्री प्रश्न को अपने समाज की आंतरिक समस्या मानते हुए उन्हें सुलझाना चाहता था किन्तु यह मात्र एक ढोंग था। तभी तो उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्त्री मुक्ति का प्रश्न राष्ट्रवादी आंदोलन के एजेंडे ओझल हो गया।

संदर्भ

1. स. सत्य प्रकाश मिलिंद, हिंदी की महिला साहित्यकार , नई दिल्ली : अन्य प्रकाशन , 2018 पृष्ठ संख्या 7
2. नीरजा माधव, हिंदी साहित्य का ओझल नारी इतिहास, नई दिल्ली: सामयिक बुक्स, 2012 पृष्ट 33
3. सुनंदा पराशर, हिंदी नवजागरण और स्त्री अस्मिता, अनन्य प्रकाशन नई दिल्ली 2017, पृष्ठ 55
4. सुनंदा पराशर, हिंदी नवजागरण और स्त्री अस्मिता, अनन्य प्रकाशन नई दिल्ली, 2017 पृष्ठ 47,
5. francesca orsini, The Hindi public sphere :1920-1940, ProQuest ,2017, page165
6. लेखिका-गरिमा श्रीवास्तव, संपादक-सत्य प्रकाश मिलिंद, हिंदी की महिला साहित्यकार, ,अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली 2018, पृष्ट 12
7. francesca orsini, The Hindi public sphere :1920-1940 , ProQuest ,2017 पृष्ट 45
8. francesca orsini, The Hindi public sphere :1920-1940 , ProQuest ,2017 पृष्ट 171
9. वीरभारत तलवार, रस्साकशी, दिल्ली : सारांश प्रकाशन, 2012 पृष्ठ 34
10. सं. हेमंत शर्मा, भारतेंदु समग्र, वाराणसी: हिन्दी प्रचारक संस्थान,1989, पृष्ठ 1013
11. सुनंदा पराशर, हिंदी नवजागरण और स्त्री अस्मिता, अनन्य प्रकाशन नई दिल्ली 2017,पृष्ठ संख्या 119
12. वही, पृष्ठ 108
13. यशपाल, पार्टी कॉमरेड, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली 1978, पृष्ठ 26
14. शुभांगी राठी, Role of Mahatma Gandhi in women's political participation, mkgandhi.org
15. नमिता सिंह, स्त्री प्रश्न, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2017, पृष्ठ संख्या 43
16. Bose:74,Nirmalkar, lectures on Gandhism
17. नीरजा माधव, हिंदी साहित्य का ओझल इतिहास, सामयिक बुक्स प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012 पृष्ठ 219
18. महादेवी, संकलन-संपादन डॉक्टर राम जी पाण्डेय, प्रतिनिधि गद्य रचनाएँ,भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली 1983, पृष्ठ 232
19. सुमन राजे, इतिहास में स्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली 2012, पृष्ठ 18
20. P.N.Chopra, historic judgements on quit India, movement, interprint/konark publishers :Delhi,1989, page229
21. फणीश्वरनाथ रेणु, मेरी कहानियां, राजपाल एंड संस, दिल्ली 2009, पृष्ठ 97